तीसरा अध्याय

रहीम के नितिकाव्य के मूल स्रोत

अध्याय तीसरा :

रहीम के नीतिकाव्य के मूल स्त्रोत

कवि रहीम ने राजा - नवाबों के कुल में जन्म लिया था। उन्हें वैभव विलास का वातावरण मिला था। परंतु इस वातावरण का प्रभाव उनके मन पर नहीं पडा। न ही अपना काव्य उन्होंने नवाब - सम्राटों के गुणगान के लिए लिखा। क्यों कि " रहीम सामान्य जन - जीवन के कवि थे। वे जन - सामान्य की हितकारी नीति को जनता - जनार्दन के लिए जन - जन की भाषा - शैली में प्रस्तुत करना चाहते थे। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि रहीम सच्चे लोक - कवि थे।"[१]

रहीम ने जो नीति - काव्य लिखा उसके जरिये सामान्य लोगों को वे उपदेश करना चाहते थे। व्यक्ति के जीवन में नीति का अधिक महत्व है। " नीति " शब्द की उत्पत्ति संस्कृत की " णीञ् " का अर्थ है "आगे ले जाना" अत: " नीति " शब्द का व्युत्पत्तिमूलक अर्थ है " आगे ले जाना " अथवा "प्रगति"। मानवी जीवन में "प्रगति" का बडा महत्व है और " नीति " का उसके लिए सर्वाधिक महत्व है। विश्वम्भर " अरूण " ने लिखा है कि - " जिस प्रकार भोजन के बिना प्राणिओं की देहास्थिति नहीं होती उसी प्रकार नीति के बिना लोक व्यवहार स्थिति नहीं होती।"[२] ये सभी जानते हुए रहीम ने अपने नीति - काव्य का सृजन किया।

वैसे रहीम के पूर्व संस्कृत का नीतिकाव्य समृद्ध था। जैसे शुक्रनीति, चाणक्य नीति, नीति शतक , नीति मंजरी , नीतिसार , नीति रत्नाकर, नीति विवेक आदि। परंतु संस्कृत के समान हिन्दी में नीतिकाव्यग्रंथों की रचना नहीं है फिर भी कबीर, जायसी, सूर, तुलसी, केशव, बिहारी, भारतेन्दु, प्रसाद, पंत , मैथिलीशरण गुप्त आदि कवियों के काव्यों में नीतिकाव्य के उदा. मिलते हैं।

नीतिकाव्य में उपदेश का वर्णन होता है। इसका प्रभाव मन पर होना चाहिए। साथ ही इसमें उदाहरण होने चाहिए , भाषा स्वाभाविक होनी चाहिए ये सभी बातें रहीम के नीतिकाव्य में स्पष्ट रूपसे मिलती हैं।

रहीम के नीतिकाव्य के तीन स्त्रोत हैं –

१) लोक – तत्व.

२) भक्ति.

३) प्रकृति.

१) रहीम के नीतिकाव्य का स्त्रोत : लोक – तत्व –

रहीम के नीति – काव्य का विश्लेषण करने पर उसमें लोक तत्वों के अनेक प्रयोग मिलते हैं। ऐसा लगता है कि कोई एक सामान्य ग्राम्य परिवार का अनुभवी व्यक्ति अपने आस – पास के व्यक्तियों के लिए काव्य–रचना कर रहा हो। रहीम को अपनी कविता के विषय तथा उनकी अभिव्यक्ति के लिए अलंकरण जन – जन के जीवन जगत् में बिखरे नजर आते हैं। वे अपने चारों ओर बिखरे कंकड – पत्थर को उठा – कर इस प्रकार दोहों के आभूषणों में फिट करते हैं कि , मणि – माणिक्य भी मात खा जाते हैं। जैसे – खेत की ढेंकुली , नट की कला, मेहँदी का बाँटना, खजूर की छाँह, ईख – गन्ने की गाँठ, सुई का धागा, कलारी का दूध , हल्दी चूने का मोल , दीपक लौ की काजल , रहँट की घडिया , चाक की नाँद , दही का मथना , कुलवधू का चिथडों में समाये रहना , सलिल का कूप से निकालना , मिसरी में बाँस की फाँस आदि का संबंध लोक – साहित्य से ही है।

परोपकार के प्रसंग में मेहंदी का कथन भी लोकानुभूति का ही प्रतिपादक है। आस – पास के खेत – खलिहानों , बाग – बगोचों तथा घर – आँगनों में रहीम के लिए काव्य – सामग्री भरी पडी है। जैसे –

SHIVAJI UNIVERSITY LIBRARY KOLHAPUR

रहिमन जग की रीति , मैं देख्यो रस ऊख में।
ताहू में परतीति , जहाँ गाँठ तह रस नहीं।।[३]

सामान्यत: कवि अपनी सूक्ष्म भावनाओं को अभिव्यक्त करने के लिए पारलौकिक तत्वों का सहारा लेते है, परंतु रहीम भक्ति , दर्शन तथा वैराग्य जैसे तत्वों की अभिव्यक्ति में भी लौकिक तथ्यों का प्रयोग करते हैं। जैसे – प्रारंभ की बिगडी के न बनने के सप्रसंग में फटे से मखन न निकलने का प्रयोग, आपत्ति काल में मित्र के शत्रु न बन जाने के लिए सुरक्षित दीपक को अपने ही हाथ से बुझा देने के उदाहरण का उपयोग आदि अनेक घटनाएँ एवं प्रसंग रहीम के काव्य में लोक तत्वों की प्रचुरता के प्रमाण हैं। इतना ही नहीं रहीम ने अपने नीति कथनों में गाँव में आग लगने तथा कूडे या घूरे के ढेरों पर चढ जाने तक की घटनाओं का विनियोग किया है। जैसे –

दुरदिन परे रहीम कहि , दुरथल जैयत भागि।
ठाढे हूजत घूर पर , जब घर लागत आगि।।[४]

अंधविश्वास तथा रूढियों का वर्णन :

लोक – काव्य के अंतर्गत प्रचलित भावों अंधविश्वासों, रूढियों, मान्यताओं एवं कुष्ठाओं की यथातथ्य अभिव्यक्ति को विशेष महत्व होता है। व्रत , उपवास , त्यौहार , संस्कार , रीति – रिवाज यहाँ तक कि जादू – टोनों इ. की अभिव्यक्ति लोक – काव्य का अंग होता है।

रहीम ने भाषा का प्रयोग भी अपने काव्य में अच्छी तरह से किया है। लोकतत्वों में भाषा का सरल, स्वाभाविक रूप मिलता है। डॉ. बालकृष्ण "अकिंचन " लिखते हैं , – " लोक मानस के भावों, लोक जीवन की मान्यताओं, लोक – वाणी के स्वरों तथा लोक विश्रुतियों के प्रयोगों को देखते हुए, रहीम के नीति – काव्य का लोकतात्त्विक अध्ययन निश्चित ही सुखद एवं शिक्षाप्रद है।"[५]

रहीम ने अपने काव्य में सामान्य जन - जीवन संबंधी दैनिक व्यवहार की शब्दावली, मुहावरे, किम्वदन्ती तथा स्थानीय प्रयोगों का उपयोग किया है। रहीम के अनेक दोहों से समाज में होनेवाले अंधविश्वास और रूढियों का सही पता चलता है।

रहीम के नीति - काव्य का दूसरा स्त्रोत - भक्ति :

रहीम का जन्म उस समय हुआ जब कि संपूर्ण भारत में भक्ति - भावना अपने अतुलनीय वैभव के साथ स्थापित हो चुकी थी। रहीम के काल में अकबर की उदार धर्म - नीति, अनुकूल शिक्षा, संस्कृत भाषा का ज्ञान तथा तुलसी आदि संतों की मित्रता ने उस उदार मुसलमान के हृदय में सगुण भक्ति की धारा निर्माण कर दी। रहीम ने फुटकर बरवैं, संस्कृत श्लोकों तथा कतिपय छन्दों में गणेश तथा हनुमान आदि हिन्दू देवी - देवताओं की स्तुति की है। इससे ज्ञात होता है कि रहीम के हृदय में वैष्णव भक्ति का प्रवाह निर्माण हुआ था।

जहाँ तक नीति - काव्य में भक्ति - भाव के समन्वय का प्रश्न है, उसके दर्शन हमें रहीम - दोहावली के प्रथम दोहे से ही होते हैं। रहीम के काव्य में भगवान राम या कृष्ण के प्रति ही भाव अधिक आये हैं। इस में रहीम के हृदय की उमडती श्रध्दा, तल्लीनता तथा भक्ति - भावना दिखाई देती है। रहीम राम और कृष्ण जैसे इष्ट देवों के होते हुए किसी से डरने की आवश्यकता नहीं समझते। जुआरि, चोर, लबार उनका बिगाड ही क्या सकेंगे, जब कि इन सब का सरदार उनका इष्टदेव स्वयं है। जैसे -

रहीमन को कोउ का करै, ज्वारी, चोर, लबार।
जो पत - राखन - हार है, माखन - चाखन हार॥[६]

रहीम की भक्ति - भावना की विशेषता यह है कि उसकी नीति - भावना। रहीम ने अन्य भक्तिकालीन कवियों की भाँति अपने काव्य को कोरा आत्म - निवेदन या राम - कृष्ण के रूप - वर्णन तक सीमित नहीं किया,

उन्होंने अपने भक्ति - भावों को नीति - कथनों से समन्वित करके व्यक्त किया है। इसीलिए उनके दोहे भक्ति से संबंधित होते हुए भी नीति के ही दोहे हैं।

रहीम को इस बात का विश्वास था कि सामान्य से सामान्य व्यक्ति भी हार्दिक प्रेम के बल पर महान से महान व्यक्ति को वश में कर सकता है। वे कहते हैं -

रहिमन मनहि लगाय कै , देखि लेहु किन कोय।
नर को बस करिबौ कहा , नारायण बस होय।।[७]

रहीम काल के सामने औषधियों की प्रभावहीनता सिध्द करते हुए अनाथ के नाथ हरि द्वारा रक्षित वनश्वापदों और खग - मृगों का उदा. देते हैं। इतना ही नहीं रहीम नयन बाणों से बचने का श्रेय सिर्फ भक्ति को ही देते हैं। सभी लोग समय , दशा , कुल देखकर सम्मान करते हैं। किन्तु भगवान के दरबार में ऐसी अव्यवस्था नहीं है। रहीम के अनुसार अपने दीन एवं अनाथ भक्तों का सहारा स्वयं भगवान है -

समय दसा कुल देखि कै , सबै करत सनमान ।
रहीमन दीन अनाथ को , तुम बिन को भगवान।।[८]

रहीम की भक्ति - भावना की और एक विशेषता है, वह है काव्य का पौराणिक आधार। रहीम अपने नीति - कथनों के लिए रामायण , महाभारत तथा पुराणों से उदा. प्रस्तुत करते हैं। ये उदाहरण रहीम की श्रध्दा भक्ति , निष्ठा तथा हिन्दू अभिरुचि के प्रतीक हैं। जैसे अपने पर संकट पडने के प्रसंग में उन्हें चित्रकूट याद आता है। भावी का अपने हाथ में न होना सिध्द करने के लिए वे श्रीराम के कपट मृग के पीछे जाने का प्रमाण देते हैं।

इसके अतिरिक्त रहीम के काव्य में श्रध्दा, निष्ठा, वैराग्य एवं प्रेम के दर्शन होते हैं। साथ ही सख्य भक्ति, दास्य भक्ति, शान्त भक्ति, श्रृंगार भक्ति और कीर्तन, स्मरण, बन्दन, अर्चन, पाद सेवन, गुण कथन आदि भक्ति के प्रकार रहीम ने अपने काव्य में व्यक्त किए हैं।

रहीम के काव्य का तीसरा स्त्रोत - प्रकृति :

रहीम के नीति - काव्य में अधिक दोहे प्रकृति पर आधारित हैं। उनके प्रकृति काव्य में सागर - नदी, नगर - ग्राम, शीत - धाम, विष - चन्दन, मणि - मौतिक, चन्द्र - चकोर, पशु - पक्षी, पेड - पत्ती, ग्रीष्म - शरद, जल - मीन, फल - फूल, कूप - तडाग, दादुर - मोर, घर - घूरा, धरती - आकाश, हीरा - राई, नभ - तारे, वन - उपवन, चीता - बाघ, कूप - सरिता, पवन - धूल, सूखा - वर्षा, दुग्ध - मध, मोती - मानुष, हल्दि - चूना, सूरज - तारे, सँाप-संगीत, मेहँदी - रंग, सिन्धु - बिन्दु आदि प्रकृति से संबंधित वर्णन आये हैं।

रहीम के काव्य में इन सभी वस्तुओं का उपयोग अन्य कवियों की भाँति केवल सौन्दर्य - चित्रण तथा भाव-उद्दीपन के लिए नहीं हुआ है। अधिक प्रयोग इन वस्तुओं का नीति - कथन के लिए किया गया है। प्रकृति के विविध क्रिया - कलापों को देखकर उनसे नैतिक संदेश प्राप्त करना, रहीम के बुध्दि - वैभव का कमाल है।

उदा - बिना जड - मूल की अमर बेल को फैलते देख, वे सभी के पालन करने वाले प्रभु का आश्रय अपनाने की प्रेरणा करते हैं।

अमर बेलि बिनु मूल की, प्रतिपालत है ताहि।
रहिमन ऐसे प्रभू तजि, खोजत फिरिए काहि।।

सूर्य - चंन्द्रादि ज्योति पिण्डों को एक ही आभा से उदित एवं अस्त हुए देखकर उन्हें सुख - दुख में एक - सा बने रहने की स्मृति हो आती है।

रहीम ने प्रकृतिक घटनाओं को देखकर उनसे जिस प्रकार नैतिक निष्कर्ष निकाले हैं उसी प्रकार अपने नैतिक निष्कर्षों के लिए प्रकृति को उदा. रूप में प्रस्तुत किया है। जैसे - अपने पास धन - धान्यादि का सहारा होने पर ही मित्र रक्षा करते हैं। अंबु के बिना, अंबुज का हित रवि भी नहीं कर पाता। चंन्द्र दुबला - कुबडा रहने पर भी नक्षत्रों से बडा गिना जाता है। जीवन मर्यादा के अनुकूल ही होना चाहिए। मर्यादा उल्लंघन करते ही उसका विनष्ट होना स्वाभाविक है। जल , तडागादि में उतना ही ठहरता है, जितने में उसके किनारे मर्यादित हैं। अधिक हो जाने पर वह बाहर बह कर पथभ्रष्ट हो जाते है।

प्रकृति - समर्थित उनके ये नीति - कथन इतने सरल, प्रभावशाली तथा प्रसिध्द हैं कि ध्यान में रखने में आसान होते हैं। प्रकृति के उदा. लेकर रहीम ने एक दोहा लिखा है वह बहुत सुंदर है। जैसे -

जो रहीम उत्तम प्रकृति , का करि सकत कुसंग।
चन्दन विष व्यापत नहीं , लिपटे रहत भुजंगा।।[९]

नीति में परंपरा - निर्वाह , मौलिकता एवं सूक्ष्मता :

रहीम द्वारा प्राकृतिक वर्णन में प्रकृति के नाना वस्तु - व्यापारों का विनियोग हुआ है। कहीं ये वर्णन नितान्त परम्परागत है और कहीं एकदम मौलिक बने हैं। भ्रमर , हंस , चातक , मयूर आदि से सम्बध्द मान्यताएँ प्रचलित हैं।

रहीम के काव्य की मौलिकता सहरानीय है। जैसे - छोटों की शोभा बडों के संसर्ग से होती है , बडे भी छोटों के संपर्क से लाभान्वित होते हैं। बडों को प्राप्त कर छोटों को त्याग देने में कोई बुध्दिमानी नहीं। सुई का काम पडने पर सुई ही उपयोगी सिध्द होगी, तलवार नहीं। मोती और मनुष्य आदि का पानी और उनकी मान - लज्जा उतर जाने पर क्या रह जाता है ? रहीम ने इसके बारे में एक दोहा लिखा है। उदा -

रहीमन पानी राखिए , बिन पानी सब सून ।
पानी गए न ऊबरे , मोती मानुष चून ।।[10]

रहीम ने प्राकृतिक दृश्यों, क्रियाओं एवं व्यापारों को सूक्ष्मता से देखा है, उस पर मनन किया है और पुन: अनुभूति से नीति के सिध्दान्तो पर घटाया है। उदा - मेहंदी बाँटनेवाले के पोरुओं के लाल होने से परोपकार की प्रेरणा, रहीम की सूक्ष्म दृष्टि का परिचायक है। प्रकृति के पत्रों - पुष्पों, फूलों - फलों को सूक्ष्मता से देखने में और उनसे नैतिक प्रेरणा ग्रहण करने में रहीम की बौध्दिकता की कमाल नजर आती है। रहीम ने प्रकृति का वर्णन आलंबनात्मक रूप में किया है। जैसे -

दादुर मोर किसान मन , लग्यो रहे घन माँहि।
रहिमन चातक रटनि हूँ, सरवर को कछु नाँहि।।

साथ ही उद्दीपनात्मक प्रकृति वर्णन में मानव - हृदय के प्रेम, वात्सल्य, घृणा, आश्चर्य, करुणा का वर्णन किया है। जैसे -

नैन सलौने अधर मृदु, कहि रहीम घटि कौन।
मीठो भावै लौन पर , अरु मीठे पर लौन ।।

इतना ही नहीं तो रहीम के काव्य में उपदेशात्मक प्रकृति - वर्णन के दर्शन होते हैं। मानवीकरणात्मक प्रकृति के वर्णन भी रहीम के काव्य से प्राप्त होते हैं। वस्तुत: प्रकृति - वर्णन रहीम का विषय नहीं है परंतु उन्होंने नीति की निगाह से प्रकृति की विभिन्न घटनाओं को देखा है और उन घटनाओं से नीति-परक निष्कर्ष निकाले हैं। रहीम ने प्रकृति का अधिक उपयोग नैतिक निष्कर्ष निकालने के लिए ही किया है।

निष्कर्ष :

रहीम के नीति - काव्य के तीन प्रमुख मूल स्त्रोत हैं - लोक - तत्व, भक्ति और प्रकृति - वर्णन। तीन स्त्रोतों द्वारा रहीम ने जीवन के सत्य का उद्‌घाटन किया है। रहीम ने अपने काव्य के लिए भारतीय लोक - जीवन एवं हिन्दु - धर्म ग्रंथों से, जिस प्रकार की सामग्री का संचयन किया है , वह उन्हें भारतीय समाज का प्रतिनिधि कवि बनाने में पूर्ण सक्षम है।

रहीम लोक - जीवन के कवि होने के कारण उन्होंने अपने काव्य में लोक सामग्री और लोक भाषा का प्रयोग किया है। रहीम ने लोक मानस के भावों को, लोक जीवन की मान्यताओं को व्यक्त किया है। रहीम का नीति - काव्य - चरित्रहीनता, नीरसता, निराशा, अनैतिकता, असफलता, नास्तिकता, संकीर्णता, धर्मांधता पर राम - बाण है।

संदर्भ सूची

(१) रहीम का नीति – काव्य
डॉ. बालकृष्ण "अकिंचन"
अलंकार प्रकाशन, प्रभम संस्करण
पृष्ठ सं. १५६

(२) रहीम – सतसई
विश्वम्भर "अरूण"
विनोद पुस्तक मन्दिर, प्रथम संस्करण
पृष्ठ सं. ९

(३) रहीम – सतसई
विश्वम्भर "अरूण"
प्रथम संस्करण, दोहा क्र. २६९, पृष्ठ सं. ११९

(४) रहीम – सतसई
विश्वम्भर "अरूण"
प्रथम संस्करण, दोहा क्र. २१४, पृष्ठ सं. १०४

(५) रहीम का नीति – काव्य
अलंकार प्रकाशन, प्रथम संस्करण, पृष्ठ १६५

(६) रहीम – सतसई
विश्वम्भर "अरूण"
प्रथम संस्करण, दोहा क्र. ३, पृष्ठ. ४६

(७) रहीम – सतसई
विश्वम्भर "अरूण"
प्रथम संस्करण, दोहा क्र. ३३, पृष्ठ सं. ३९

(८) रहीम के दोहे
प्रकाशक – लोंढे शंकरराव
प्रथम संस्करण, दोहा क्र. १५, पृष्ठ सं. २

(९) रहीम के दोहे
प्रकाशक – लोंढे शंकरराव
प्रथम संस्करण, दोहा क्र. १६४, पृष्ठ. १५

(१०) रहीम के दोहे
प्रकाशक – लोंढे शंकरराव
प्रथम संस्करण, दोहा क्र. ८६, पृ.सं. ८